

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 21-10-17

2022 तक विकसित देश?

टी. एन. नाइनन



क्या वर्ष 2022 तक भारत एक विकसित देश बन सकता है? प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने शुक्रवार को केदारनाथ में यह संभावना व्यक्त की। इस सवाल का जवाब तलाशने के लिए हमें विकसित की परिभाषा देखनी होगी। इस प्रश्न का उत्तर तलाशने का एक तरीका यह है कि हम अर्थव्यवस्था की स्थिति, वित्तीय विकास और विनिर्माण क्षमता आदि पर नजर डालें। उदाहरण के लिए विकसित देशों में प्रायः सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में औद्योगिक और सेवा क्षेत्र का दखल रहता है। भारत में सेवा क्षेत्र का

दबदबा है लेकिन इसका बड़ा हिस्सा वहां से आता है जिसे अर्थव्यवस्था का 'आधुनिक' भाग नहीं कहा जा सकता। विनिर्माण क्षेत्र तो पूर्वी एशियाई मुल्कों तक की तुलना में काफी छोटा है विकसित देशों की तो बात ही छोड़ दी जाए। इतना ही नहीं करीब आधी आबादी अभी भी कृषि कार्य में रत है और किसान मोटे तौर पर हताश और निराश हैं। इन सब में बदलाव आएगा मगर धीरे-धीरे। भले ही हम कितने भी महत्वाकांक्षी लक्ष्य क्यों न तय कर लें। उदाहरण के लिए मेक इन इंडिया में यह लक्ष्य तय किया गया है कि 2025 तक देश के जीडीपी में इसका योगदान 25 फीसदी किया जाएगा। यह असंभव है। जहां तक आम भारतीयों के जीवन में प्रौद्योगिकी के दखल की बात है तो मोबाइल फोन और मंगल अभियान की सफलता के बावजूद यह बहुत बुनियादी है।

दूसरी ओर विनिर्माण और सेवा क्षेत्र में हमारे यहां बहुत बेहतर कंपनियां भी नहीं हैं और न ही एक सुविकसित वित्तीय तंत्र मौजूद है। कुल अर्थव्यवस्था में इनकी पहुंच का काम अभी चल ही रहा है। जीडीपी की तुलना में शेयर बाजार का आकार और बचत का स्वरूप दोनों उल्लेखनीय हैं। यहां तक कि बुनियादी ढांचागत जैसे दिक्कतदेह क्षेत्र में भी देश का प्रदर्शन उतना बुरा नहीं है जितना कि सोचा जाता है। लॉजिस्टिक्स (इसमें कारोबारी बुनियादी ढांचा, अंतरराष्ट्रीय ढुलाई, समयबद्धता, सीमा आदि शामिल हैं) के मामले में भी वैश्विक रैंकिंग में हमारी स्थिति बहुत खराब नहीं है। विश्व बैंक ने 160 देशों की सूची में भारत को 35वें स्थान पर रखा है। हम इस सूचकांक में तुर्की और पुर्तगाल के साथ हैं जबकि थाईलैंड और ब्राजील जैसे देशों से बेहतर। आर्थिक ढांचों और तंत्र से परे हटकर देखें तो आय के स्तर और सामाजिक संकेतकों की बात आती है। सालाना मानव विकास रिपोर्ट बताती है कि भारत करीब दशक भर पहले मानव विकास के क्षेत्र में निम्न से मध्यम देशों की श्रेणी में आ गया है। प्रगति की मौजूदा दर से देखें तो उच्च विकास की श्रेणी (जहां चीन अभी है) में आने में अभी करीब एक दशक का वक्त लगेगा। एक श्रेणी 'अति उच्च विकसित' नामक भी है।

मानव विकास सूचकांक में तीन संकेतक शामिल रहते हैं: प्रति व्यक्ति आय, स्कूली शिक्षा का स्तर और जीवन संभाव्यता। इनमें से पहले संकेतक की बात करें तो देश की प्रति व्यक्ति आय 1,850 डॉलर है और यह निम्न-मध्य आय की श्रेणी में आती है। विश्व बैंक के मानकों के मुताबिक उच्च-मध्य आय की श्रेणी में शामिल होने के लिए प्रति व्यक्ति आय को दोगुना करना होगा। इस काम में कम से कम अगला एक दशक या उससे ज्यादा वक्त लग जाएगा। प्रति व्यक्ति आय के वैश्विक औसत को देखा जाए तो उसे हासिल करने के लिए इसमें और अधिक इजाफा करना होगा और वह दूर की कौड़ी है। जहां तक साक्षरता की बात है तो 160 देशों की सूची में भारत को 124वां स्थान हासिल है और वह कंबोडिया, कैमरून और पूर्वोत्तर अफ्रीका के देश एरिट्रिया से भी नीचे है। हमारे देश की साक्षरता दर अभी भी 75 फीसदी से कम है। जबकि वियतनाम और म्यांमार समेत 90 से अधिक देशों में यह 90 फीसदी से अधिक है। दूसरे शब्दों में कहें तो अभी लंबा सफर तय करना बाकी है। जहां तक स्वास्थ्य सूचकांकों की बात है तो जीवन संभाव्यता के मामले में भी भारत की स्थिति साक्षरता से बेहतर नहीं है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की 183 देशों की सूची में उसका स्थान 125वां है। 67 देशों में जहां जीवन संभाव्यता 75 वर्ष या उससे अधिक है वहीं भारत में यह 68.3 वर्ष है। भारत के लिए 2022 तक जीवन संभाव्यता में इतना सुधार करना करीब-करीब असंभव है। अगर विकसित देश के निर्धारण के इन तार्किक संकेतकों पर परखा जाए तो हकीकत यह है कि भारत के अगले पांच सालों में इस मुकाम तक पहुंचने की कोई संभावना नहीं है। अगर गंभीरता दिखानी है तो लक्ष्य ऐसे तय किए जाने चाहिए जिन्हें हासिल किया जा सके।



दैनिक भास्कर

Date: 21-10-17

चीन से निराशा के बाद भारत के करीब आता अमेरिका

भारत-पाकिस्तान की यात्रा पर आ रहे हैं और अरुण जेटली की लंबी अमेरिका यात्रा दो दिन पहले ही समाप्त हुई है।

संपादकीय



अमेरिकी विदेश मंत्री रेक्स टिलरसन ने जब भारत को अमेरिका के लिए अवसर और उनके देश की प्रशांत सागरीय रणनीति का लंगर बताया तो इसे केवल विरुदावली नहीं माना जा सकता, जो ऐसे औपचारिक भाषणों में प्रायः व्यक्त की जाती है। टिलरसन ने अमेरिका के सेंटर फॉर स्ट्रेटेजिक एंड इंटरनेशनल स्टडीज में अगली सदी में भारत के साथ रिश्तों पर यह भाषण ऐसे समय दिया है जब अगले हफ्ते वे

भारत-पाकिस्तान की यात्रा पर आ रहे हैं और अरुण जेटली की लंबी अमेरिका यात्रा दो दिन पहले ही समाप्त हुई है।

फिर यह भाषण पिछले कई महीनों से दक्षिण एशिया में मौजूद चुनौतियों और अवसरों को लेकर ट्रम्प प्रशासन में सर्वोच्च स्तर पर चल रहे विचार-विमर्श का नतीजा है। राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प के नीतिगत मामलों पर दुलमूल रवैये के बावजूद अब कहा जा सकता है कि कम से कम दक्षिण एशिया को लेकर अमेरिकी नीति में कोई दिशा तय हो रही है। इसकी एक वजह वह भी है जिसकी ओर चीनी मीडिया ने कई बार इशारा किया था कि अमेरिका व चीन के रिश्तों में निराशा का दौर अपरिहार्य है। टिलरसन के मुताबिक चीन अंतरराष्ट्रीय कायदे-कानून को ज्यादा महत्व नहीं देता, पड़ोसी देशों की संप्रभुता का मान नहीं करता और वन बेल्ट वन रोड की ओर इशारा करते हुए कहा कि बुनियादी ढांचे में उसके निवेश से रोजगार तो पैदा नहीं हुआ बल्कि मेजबान देशों पर कर्ज का भारी बोझ जरूर आ गया।

उन्होंने चीन को विश्व व्यवस्था के लिए खतरा तक बता दिया। अमेरिकी विदेश मंत्री ने पाकिस्तान की ज्यादा आलोचना नहीं की किंतु पूरे भाषण में उसके लिए उन्होंने तीन ही वाक्य कहकर साफ कर दिया उसके साथ रिश्तों में अब वह बात नहीं रही। भारत के प्रति अनुकूल और इसके प्रतिद्वंदियों के लिए टिलरसन की प्रतिकूल बातों के बावजूद इस बात को नज़रअंदाज नहीं किया जा सकता कि ट्रम्प प्रायः ट्वीट करके टिलरसन के कूटनीतिक प्रयासों में पलीता लगाते रहे हैं। दोनों के बीच टकराव को देखते हुए टिलरसन के विदेश विभाग से विदा होने की भी अटकलें लगाई जाती रही हैं। दूसरी तरफ यह भी सच है कि उत्तर कोरिया पर लगाम लगाने में चीन से कोई मदद न मिलते देखकर हो सकता है, अमेरिका वाकई चीन से निराश होकर उसकी भूमिका को वास्तविक परिस्थितियों में देखने पर मजबूर हुआ हो।



Date :19-10-17

Speak, Woman

The #MeToo campaign allows women a rare experience of public solidarity. Hope the men are listening in

The world is what it is. It does not believe a woman easily. It tells her she asked for it; or that she was inappropriately dressed. It tells her the powerful man did no wrong if he violated her. It tells her he will get away. Should she speak up even then, the omerta kicks in, erasing all protest, eroding her credibility and leaving her with a deep sense of shame. Since Sunday, women across the world have been aiming a two-word slingshot against this toxic silence. It started with the American actress, Alyssa Milano, asking women who had been sexually harassed or assaulted to publicly acknowledge that experience with the hashtag: Me too. In response, thousands of women have posted stories of horrific experiences at the hands of friends, employers, lovers, relatives, and their own Harvey Weinstens — a real-time map of the pervasive assault and harassment in which women's lives are embedded.

The trigger for this near-cathartic outpouring was not just Milano's tweet, but a larger, insistent conversation about a culture that enables sexual violence. Earlier this month, a New York Times investigation revealed how Weinstein, one of the most powerful men in Hollywood, had, for over close to three decades and with total impunity, assaulted women in the industry. He is only one among recent successful American men to have been revealed as sexual predators — the list includes Bill Cosby, Jimmy Saville, R Kelly, and, according to a Washington Post investigation, the POTUS himself. Closer home, our own experience of the rage on Delhi's streets after the gang rape of a young woman in December 2012; the students' protest in the Banaras Hindu University, and a recent high court judgement that doubts the veracity of a woman's "feeble" no, among many others, have led to a long-due acknowledgement of the routine violation of a woman's sexual autonomy and freedom — as well as the entrenched systems of denial that enable it.

In that context, the #MeToo movement is an astonishing assertion. For women, it allows a rare experience of public solidarity. It turns a private trauma into a collective voice of anger and indignation. But this is not a conversation about women alone. The bigger question is: What difference has it made to the men listening in? If this wave of anguish points to a pervasive pathology at the heart of sexual relations, what are men — and the institutions they control — willing to do about it? The women have spoken. Now, the responsibility of action — whether in India or America — is also on men: To join the conversation, to acknowledge their role in silencing women and then push for change.
